ओ३म्

‘हमारी सूरत हमारे पूर्व जन्म के कर्मों के अनुरूप’

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

सूरत मनुष्य की आकृति को कहते हैं। भारत की जनसंख्या लगभग 125 करोड़ और सारे संसार की लगभग 7 अरब से कुछ अधिक है। यह एक बड़ा आश्चर्य है कि सभी स्त्री व पुरूषों, बुजुर्गं, जवान या बच्चे, की मुखों की सूरत, चेहरा, आकृतियां, शकल, कद–काठी, रंग–रूप अलग–अलग हैं। प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों है? कौन इन्हें बनाता है? हम अपने उद्योगों में नाना प्रकार के उत्पाद बनाते हैं, वह सब एक जैसे होते हैं। एक ही प्रकार के उत्पादों में आकृति की दृष्टि से अन्तर करना कठिन होता है। इसलिए उन पर संख्या डालनी पड़ती है जिससे उन्हें पहचाना जा सके। परन्तु संसार में हम देखते हैं कि मनुष्य योनि में अगणित वा 7 अरब से अधिक लोग हैं। सबकी सूरत व चेहरे भिन्न–भिन्न हैं। एक ही माता–पिता से जन्म लेने वाली सन्तानें भी रूप, रंग, आकार, प्रकार, आकृति व प्रकृति में एक दूसरे से भिन्न होती हैं। इसका कारण क्या हो सकता है? इस पर धर्म को यथार्थ रूप में जानने वाले लोगों की मान्यतायें भिन्न–भिन्न हो सकती हैं। **धार्मिक लोग भी अनेक मतों, मजहबों, सम्प्रदायों आदि में बंटे हुए है। सबकी आस्थायें, मान्यतायें व सिद्धान्त पृथक–पृथक या भिन्न–भिन्न हैं।** यदि सबका तुलनात्मक अध्ययन करें और फिर गुण–दोष, युक्ति व प्रमाणों के आधार पर विवेचना करें तो यह तथ्य सामने आता है कि **मनुष्य की सूरत व आकृति अर्थात् चेहरा एक ऐसी सत्ता द्वारा निर्मित है जो मनुष्य से भिन्न है व इससे अधिक ज्ञानी, शक्ति–सम्पन्न या सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, अनुभवी है। वह पूर्व कल्प–कल्पान्तरों–युगों से ऐसा ही करती चली आ रही है तथा उसे इस कार्य को अर्थात् प्राणी जगत की उत्पत्ति करने व मनुष्यों के शरीर व उनकी सूरत बनाने का पूर्ण अनुभव व ज्ञान है।** जब वह सत्ता पहले से ऐसा करती आ रही है तो भविष्य में भी करती रहेगी। ‘’**उस सत्ता व कर्ता को ही ईश्वर कहते हैं।**’’

यह बात तो ईश्वर के बारे में हुई। **अब आकृति भेद या अलग–अलग सूरत होने का कारण क्या है?** इस पर भी विचार करना आवश्यक है। इसका उत्तर हमें यह मिलता है कि जन्म से पूर्व जीवात्मा अन्यत्र कहीं मनुष्य या अन्य किसी पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि योनियों में रहा है। हम नित्य–प्रति देखते हैं कि मनुष्य, पशु, पक्षी आदि मरते हैं और उससे भी अधिक या बराबर संख्या में नये जीव–प्राणधारी सृष्टि क्रम व नियमों के अनुसार उत्पन्न होते हैं। मृत्यु होने पर सबके शरीरों में से चेतन तत्व अर्थात् **‘’जीवात्मा’’** निकल जाता है एवं निर्जीव पार्थिव शरीर जिसे मृत्यु के बाद **‘शव’** की संज्ञा दी जाती है, हमारे सामने होता है जिसकी अन्येष्टि करके उसे पंच–तत्वों में विलीन कर दिया जाता है। यह मृत्यु को प्राप्त होकर जो चेतन तत्व शरीर से निकलता है, यह स्वभाविक है कि वह निकलने के बाद इस ब्रह्माण्ड या आकाश में रहता है। **हम सब अनुभव से यह भी जानते हैं कि चेतन तत्व जीव अल्पज्ञ व सूक्ष्म तत्व है, यह प्रत्यक्ष व निर्विवाद है।** जब इसका जन्म हुआ था तो यह माता–पिता के संयोग व प्राकृतिक अन्य नियमों के अनुसार जन्मा था। उसी प्रकार से अब मृतक जीवात्मा आकाश से माता के गर्भ में जाता है। **यह कार्य ईश्वर करता है** जिसका आधार उसकी पूर्व योनि व उससे भी पूर्व के शेष व अभुक्त कर्म, जिन कर्मों का भोग नहीं हो सका व जिनको भोगा जाना है, होते हैं **जो प्रारब्ध कहलाते हैं और इस जन्म में इसी को भाग्य भी कहा जाता है।** इसी के आधार पर जहां जीवात्मा को किस योनि में जन्म देना है, इसका निर्धारण ईश्वर करता

है। ***उस जीवात्मा की उस नई, पुनर्जन्म की, योनि की आकृति क्या हो, उसका निर्धारण भी ईश्वर के द्वारा ही किया जाता है जिसका प्रमाण हमें संसार के सभी मनुष्यों व अन्य योनियों के प्राणियों को देखकर होता है।*** **एक माता की सभी सन्तानें अलग–अलग आकृति व सूरत वाली होती हैं। इसका कारण उन जन्म लेने वाले शरीरों की आत्माओं का प्रारब्ध व भाग्य ही है।** इसका अन्य कोई कारण है ही नहीं और न किसी ने सूरत की भिन्नताओं पर कोई मान्यता व सिद्धान्त अब तक स्थापित किया है।

हम प्रायः यह भी देखते हैं कि सन्तानों की सूरत में अपने माता या पिता से कुछ–कुछ साम्यता होती है। भाई व बहिनों की सूरतों में भी परस्पर साम्यता देखी जाती है। हमने दो जुड़वा बहिनें ऐसी भी देखी हैं कि जिनमें बाल्यावस्था में हम भेद नहीं कर पाते थे कि इनमें से कौन सी ऋजु नाम वाली है और कौन ऋतु नाम वाली। लेकिन माता–पिता को कभी भ्रम नहीं होता था, तो हमें आश्चर्य होता था। यह हमें ईश्वर का करिश्मा प्रतीत होता है। ईश्वर ने यह अपवाद किया होता है, शायद् **यह जताने के लिए कि मैं यद्यपि सबकी सूरतें अलग–अलग बनाता हूं परन्तु मैं दो बच्चों की सूरतें एक जैसी भी बना सकता हूं लेकिन माता–पिता भ्रमित न हों, इसलिए उन्हें भ्रम नहीं होने देता अन्यथा उन्हें उनके पालन–पोषण में कठिनाई होगी।** ऐसा भी होता है कि हमारा परिचय व निकट सम्बन्ध किसी व्यक्ति से होता है तो हम उसके भाई या बहिन से अन्यत्र मिलने पर उसके हाव–भाव से उसको उस व्यक्ति से निकट सम्बन्ध के कारण अनुमान से जान लेते हैं। एक बार ऐसा हुआ कि एक बालक किसी वाद–विवाद प्रतियोगिता में भाषण दे रहा था। हम ध्यान से सुन रहे थे। उसके हाव–भाव व बोलने के तरीके से हमें लगा कि यह हमारे मित्र श्री नरेश बंसल का छोटा भाई हो सकता है। हमने श्री नरेश बंसल के माता व पिताजी को भी देखा हुआ था। जब उस बालक का भाषण समाप्त हुआ तो वह हमारे पास आकर बैठ गया। हमने धीरे से उससे पूछा कि क्या वह श्री नरेश बंसल का छोटा भाई तो नहीं है तो उसने बताया कि हां, मैं श्री नरेश बंसल जी का छोटा भाई हूं। इससे यह लगता है कि यह संसार कुछ रहस्यपूर्ण भी है। हम इसका जितना अध्ययन करते हैं उतने ही अधिक रहस्यों का हमें ज्ञान होता जाता है।

हम लोग अपने व्यवहार में ''प्रकृति'' शब्द का प्रयोग करते हैं। हमारा जन्म व मृत्यु, सुख व दुख, संसार की रचना व उसका संचालन, प्राकृतिक प्रकोप व विपदायें सभी को नेचर या प्रकृति का नाम देकर कह देते हैं **यह सब प्रकृति करती है।** अतः यह विचार करना आवश्यक हो जाता है कि प्रकृति जड़ है या चेतन। संसार में दो प्रकार के पदार्थ देखें जाते हैं, एक जड़ पदार्थ हैं व दूसरे चेतन पदार्थ। जड़ पदार्थों को हमारे सत्य शास्त्रों में जड़, सूक्ष्म, सत्व–रज–तम गुणों वाली प्रकृति का विकार व कार्य कहा जाता है। यह विकार स्वमेव नहीं होता अपितु सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर जो कि सर्वव्यापक, सर्वज्ञ व सर्वशक्तिमान है, उसके द्वारा किया जाता है। वह सूक्ष्म जड़ प्रकृति से कार्य जगत यथा सूर्य, चन्द्र, पृथिवी एवं पृथिवीस्थ सभी पदार्थ अग्नि, जल, वायु व आकाश आदि को बनाता है। उसी के द्वारा वन व पर्वत बनायें गये हैं और उसी ने समुद्र भी बनाया है। मनुष्य का जन्म भी उसी सत्ता ईश्वर से होता है, होता आ रहा है और होता रहेगा। ***यदि ईश्वर को न माने तो जड़ पदार्थों में स्वमेव संयोग करके किसी प्रयोजन को पूरा करने वाला पदार्थ बनाने की योग्यता या क्षमता तो होती नहीं है जिससे कोई भी रचना अस्तित्व में नहीं आ सकती। ईश्वर को मानना अनिवार्य एवं अपरिहार्य है। इसका कोई विकल्प नहीं है।*** इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। घर में रोटी बनाने के लिए ईधन, आटा, जल, बर्तन आदि सभी कुछ हो। उन्हें आस–पास रख दिया जाये परन्तु रोटी, कितना ही काल क्यों न बीत जाये, कभी नहीं बन सकती **जिसका कारण यह है कि जड़ पदार्थो में किसी विशेष प्रयोजन को जानने व उसे पूरा करने का ज्ञान नहीं है।** चेतन तत्व

जीवात्मा व परमात्मा ईश्वर को यह ज्ञान है कि उन्हें प्रयोजन के अनुसार जड़ पदार्थ कारण प्रकृति व कार्य प्रकृति का प्रयोग करके इच्छित प्रयोजन को पूरा करना व सिद्ध करना है। यदि रोटी बनाने का कहीं सब समान उपस्थित हो और वहां कोई मनुष्य पहुंच जाये जिसे रोटी बनाने का ज्ञान हो तथा उसे भोजन करना हो तो वह अपने ज्ञान, बल, संस्कारों व अभ्यास को दोहरा कर रोटी बनाकर अपनी क्षुधा को तृप्त कर सकता है। **इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हम व्यवहार में जिसे नेचर व प्रकृति कहते हैं, वह जड़ नहीं अपितु चेतन है।** जो कार्य हम संसार में देखते हैं उनकी दो श्रेणियां होती है **एक अपौरूषेय कार्य व दूसरे पौरूषेय कार्य।** जिन कार्यों को संसार का काई भी मनुष्य नहीं कर सकता तथा ऐसे सभी कार्य जो हमें आंखों से दिखायी देते हैं, यथा सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि का निर्माण व संचालन तथा मनुष्य व अन्य प्राणियों को जन्म देना और उन्हें व्यवस्था में रखना आदि कार्य, वह ईश्वर व परमात्मा द्वारा किये जाते हैं जिन्हें **अपौरूषेय कार्य कहते हैं।** मनुष्यों द्वारा किये जाने वाले व सम्भव कार्यों को पौरूषेय कार्य कहते हैं। **अतः जिन कार्यों के लिए नेचर या प्रकृति शब्द का प्रयोग किया जाता है वह कार्य प्रायः ईश्वर जो कि चेतन व सर्वव्यापक तत्व है, उसके लिए प्रयोग किया जाता है।** अतः हमें विदेशी लोगों का अन्धानुकरण न कर प्रकृति, नेचर व ईश्वर के अन्तर को जानना व समझना चाहिये।

हमने मनुष्यों की सूरत व उसमें भिन्नता के कारणों को समझने का प्रयास किया है। जिस प्रकार ईश्वर ने प्रकृति में भिन्न–भिन्न प्रकार के पुष्प जो मन व हृदय को आकर्षित व सम्मोहित करते हैं, जिनके रूप व सुगन्ध का शब्दों में पूरी तरह से वर्णन व मूल्याकंन करना शब्द विज्ञानियों–शास्त्रियों के लिए भी सम्भव नहीं है, उसी प्रकार से मनुष्य की नाना रंग व रूपों वाली सूरत को देख कर ईश्वर की रचना शक्ति के ज्ञान का अनुमान होता है। इस आश्चर्य को देखकर हृदय से शब्द प्रस्फुटित होते हैं, कि हे ईश्वर, **'तेरा पार किसी ने भी पाया नहीं, दृष्टि किसी की भी आया नहीं, तेरा पार किसी ने भी पाया नहीं।'** ईश्वर संसार का सबसे बड़ा व महान रचयिता, कारीगर, निर्माता, चिन्तक व सृष्टि को बनाने, धारण करने, चलाने व व्यवस्था करने वाली एक ऐसी महान सत्ता है जिसकी उपमा हम किसी अन्य वस्तु व सत्ता से नहीं दे सकते। वह अपनी उपमा आप ही है। इससे यह निष्कर्ष भी निकाला जा सकता है कि वह ईश्वर सत्य, चित्त व आनन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र व सृष्टिकर्ता है। उसने हमें मानव जीवन देकर, इस सृष्टि को बनाकर तथा हमारे उपयोग के लिए नाना सुखदायक पदार्थ बनाकर हम पर जो उपकार किए हैं उसके कारण इन गुणों व स्वरूप वाला ईश्वर ही हमारी स्तुति व प्रार्थना के द्वारा हमारा उपास्य देव हैं। हम उसी ईश्वर को मन, वचन व कर्म से स्वयं को समर्पित करके, उसका ध्यान व चिन्तन द्वारा गुणगान करते हुए देश, समाज व प्राणीमात्र के कल्याण के कार्यों को करके उसके कृपा पात्र बन सकते हैं। ऐसा करके हम उसके निकट पहुंच जायेगें और उसकी कृपा को प्राप्त करके उसके द्वारा प्राप्त होने वाले सुख व आनन्द का अनुभव कर सकेगें। मोह व माया में न फंस कर त्याग व समर्पण का जीवन व्यतीत कर अपने जीवन को सफल व उपयोगी सिद्ध कर सकेगें। विभिन्न मनुष्यों की भिन्न–भिन्न मुखाकृतियां व सूरतें ईश्वर की रचनायें हैं जो मुखाकृति की ओट में ईश्वर के होने व सौन्दर्यपूर्ण रचना द्वारा उसको जानने व प्राप्त करने का सन्देश दे रही हैं। आईये, सूरत बनाने वाले ईश्वर की ओर प्रस्थान करें और उसे प्राप्त करने का प्रयास करें।

–मनमोहनकुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001 / फोनः 09412985121
इमेलः manmohanarya@gmail.com